

مارچ ۲۰۱۷ء

ماہنامہ شعاعِ عمل لکھنؤ



قَالَ اللَّهُ تَبَارَكَ وَتَعَالَى قَدْ جَاءَكُمْ مِنَ اللَّهِ نُورٌ وَكِتَابٌ مُبِينٌ
يَهْدِيكُمْ تِهَادًى يَهْدِيكُمْ إِلَى طَرَفٍ مَعْرُوفٍ

اللہ اکبر
الحمد لله
سبحان الله



نور ہدایت فاؤنڈیشن، حسینہ غفران مااب، چوک، لکھنؤ-۳

R.N.I NO. UPBIL/2004/13526

Postal Regd. No. SSP/LW/NP-75/2017-19 Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

Annual Rs. 200/-

March 2017

Per Copy- Rs.25/-

شُؤآ-ع-آمل

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ



آقائے قوم قدوة العلماء آية اللہ العظمی سید آقا حسن نقوی اکمل جاسی غفران مکان
بانی آل انڈیا شیعہ کانفرنس و شیعہ کالج و شیعہ یتیم خانہ و شیعہ بیت المال، لکھنؤ

ولادت ۶ ربیع الاول ۱۲۸۲ھ مطابق ۱۸۶۵ء وفات پنجشنبہ ۷ ربیع الثانی ۱۳۴۸ھ مطابق ۱۲ ستمبر ۱۹۲۹ء

SHUA-E-AMAL

Lucknow



NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufuran Maab, Chowk, Lucknow-3 (U.P.) INDIA, Ph.:0522-2252230

Per Copy 25/-
Annual 200/-

बिस्मिल्ली तशाला

नूरे हिदायत फाउण्डेशन के

इस्लामी, ज्ञान व शोध

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

मार्च 2017 ई०

शुआ-ए-अमल

“लखनऊ”

संरक्षक

काएदे मिल्लत मौलाना सै. कल्बे जवाद नकवी साहब

अकबर
प्रचार प्रसार

माननीय नवाब रज़ा साहब, भोपाल

सम्पादक

सै. मुस्तफ़ा हुसैन नकवी ‘असीफ़’ जायसी

उप-सम्पादक

कायम महदी नकवी ‘तज़हीब’ नगरौरी
आसिफ़ अब्बास नौगांवी, इमरान आगा

सलाहकार समिति

- प्रोफ़ेसर अल्लामा अली मुहम्मद नकवी, अलीगढ़
- डॉ० महदी ख्वाजा पीरी, ईरान
- मौलाना हसन ज़फ़र नकवी, कराची
- कैप्टन सिकन्दर रिज़वी, लखनऊ
- प्रोफ़ेसर हुसैन कमालुद्दीन अकबर, इलाहाबाद
- सै० अहमद अब्बास नकवी, मुम्बई
- शायरे अहलेबैत रज़ा सिरसिवी, सिरसी
- सै० सैफ़ तकी नकवी, दिल्ली
- मुहम्मद आलिम, हुसैनाबाद, लखनऊ

मिलने का पता

नूरे हिदायत फाउण्डेशन

इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ - 3

Phone No: 0522-2252230

Mobile No: 08736009814 — 09335996808

प्रकाशक मुद्रक: सैय्यद मुस्तफ़ा हुसैन नकवी द्वारा स्वामी एस कल्बे जवाद नकवी के लिए निज़ामी प्रेस विकटोरिया स्ट्रीट अपोज़िट हसनैन मार्केट, चौक, लखनऊ (उ० प्र०) से मुद्रित तथा नूरे हिदायत फाउण्डेशन, इमामबाड़ा गुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक लखनऊ (उ० प्र०) से प्रकाशित।
सम्पादक: सैय्यद मुस्तफ़ा हुसैन नकवी

मार्च - 2017

मासिक “शुआ-ए-अमल” लखनऊ

3

सम्पादन समिति

- ⇒ डॉ० अमानत हुसैन नकवी
- ⇒ अमील शम्सी
- ⇒ वासिफ अहमद नकवी 'समीर'
- ⇒ शाहिद अली आजमी
- ⇒ जुलफेकार हैदर आजमी
- ⇒ अलहाज मिर्जा हुमायूँ कदर
- ⇒ डॉ० आरिफ अब्बास
- ⇒ रेहान आलम, लखनऊ
- ⇒ बिनते ज़हरा 'नदल हिन्दी'

- ज़फ़र हुसैन रिज़वी ब्यूरोचीफ़ मुम्बई
- इरफ़ान हैदर, ब्यूरोचीफ़ मध्यप्रदेश
- कैफ़ तकी नकवी, ब्यूरोचीफ़ देहली

R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526



Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2017-2019



WEBSITE:

www.noorehidayatfoundation.org
www.naqeeblucknow.com

E_mail:

noorehidayat@yahoo.com
noorehidayat@gmail.com
shuaeamallucknow@gmail.com

वार्षिक अंशदान

- 1- एक साल के लिए 200/-
- 2- पांच साल के लिए 800/-
- 3- लाईफ़ मिम्बरशिप 5000/-

विषय सूची

मार्च 2017^{ई०}

जमादिउस्सानी 1438^{हि०}

नं०	लेख व लेखक	पृष्ठ
1.	शहीदे इन्सानियत (किस्त-1) आयतुल्लाहिल उज़मा सै० अली नक़ी नक़वी	5
2.	पहली मजलिस शाएरे अहलेबैत अल्लामा नज़्म आफ़न्दी	13
3.	हकीक़ते दीन (किस्त-9) मुफ़्किरे इस्लाम डॉ० मौलाना सै० कल्बे सादिक़ नक़वी	14
4.	मुख्य समाचार इदारा	17

FORM-IV

(See Rule No-8)

- Place of Publication: Noorehidayat Foundation
Imambara Ghufanmaab,
Maulana Kalbe Husain Road,
Chowk, Lucknow
- Periodicity: Monthly
- Printer's Name: Syed Mustafa Husain Naqvi
Whether citizen of India: Yes
Address: Imambara Ghufanmaab,
Maulana Kalbe Husain Road
Chowk, Lucknow (U.P.)
- Publisher's Name: Syed Mustafa Husain Naqvi
Whether citizen of India: Yes
Address: Imambara Ghufanmaab,
Maulana Kalbe Husain Road
Chowk, Lucknow (U.P.)
- Editor's Name: Syed Mustafa Husain Naqvi
Whether citizen of India: Yes
Local Address: Imambara Ghufanmaab,
Maulana Kalbe Husain Road,
Chowk, Lucknow
Permanent Address: Imambara Ghufanmaab,
Maulana Kalbe Husain Road
Chowk, Lucknow (U.P.)
- Owner's Name: Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India: Yes
Address: 39, Jauhari Mohalla,
Chowk, Lucknow

I Syed Mustafa Husain Naqvi, hereby declare that the particulars given are true and correct to the best of my knowledge and belief.

Lucknow
Date: 01-03-2017

Syed Mustafa Husain Naqvi
Printer and Publisher

शहीदे इन्सानियत

आयतुल्लाहिल उजमा सैय्यदुल उलमा मौलाना सै० अली नकी नकवी ताबा सराह

तमहीद

बिस्मिल्लाहिर्रहमा निररहीम
अलहम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन वस्सलातो
अला सय्येदिल मुरसलीन व आलेहिक्ताहेरीन

दुनिया में कोई तालीम याफ़ता ऐसा न होगा जिसने अरब का नाम न सुना हो। अरब एक रेगिस्तानी मुल्क है जो ऐशिया की मगरबी सरहद पर वाक़े है और जिसके साहिल पर बहरे अहमर (लाल समुद्र) लहरें मार रहा है, उसी मुल्क से सातवीं सदी ईसवी शुरू होने के बाद एक इन्केलाब की लहर उठी जिसका नाम है “इस्लाम” उस इन्केलाब के बानी हज़रत मोहम्मद बिन अब्दुल्लाह थे जिन्होंने अपनी पैग़म्बरी का ऐलान करते हुए दुनिया को कामिल तौहीद का पैग़ाम पहुंचाया और बुत परस्ती, इक्तेदार परस्ती, सरमाया परस्ती गरज़कि गैरुल्लाह की हर तरह की परस्तिश की मुख़ालिफ़त की। उससे उन लोगों को मुख़ासिमत (दुश्मनी) पैदा हो गई जिनके इक्तेदार को इस तालीम से नुक़सान पहुँचता था। उन्होंने इस इन्केलाब को रोकने की कोशिश की और उनके हाथों पैग़म्बर को बड़ी तकलीफ़ें उठाना पड़ीं।

इस मुख़ालिफ़त में बनी उमय्या पेश पेश थे। इसलिये कि अगरचे पैग़म्बरे इस्लाम^{स०अ०} की तालीम बराहे रास्त किसी ख़ानदान की बलन्दी और किसी ख़ानदान की परस्ती की हिमायत नहीं करती थी मगर आपकी तालीम में बलन्दी और इज़्ज़त का जो मेयार करार दिया गया था वह सिर्फ़ किरदार की खूबी, फ़राएज़े इन्सानी की

बजा आवरी (पूरा करना) थी। इस मेयार पर बनी उमय्या के अक्सर अफ़राद पूरे न उतरते थे। चुनानचे उमय्या के पोते अबू सुफ़यान बिन हर्ब ने इस्लाम के ख़िलाफ़ बगावत का झंडा बलन्द किया। अरब के हट धर्म और जाहिल बुत परस्त उस अलम के नीचे जमा हो गए और हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} को सताने और तबलीगे इस्लाम में रोड़े अटकाने लगे और आप बराबर मुसीबतें और सख़्तियाँ झेलते रहे और दायरा आपके पैग़ाम की मक़बूलियत का वसीअ (फैलता) होता गया। यहाँ तक कि हिजाज़ (आज का सऊदी अरब) के दूसरे अहम शहर मदीने के रहने वालों ने इस तालीम को कुबूल कर लिया और आपकी नुसरत का वादा करके आपको और आपके साथियों को वहाँ आने की दावत दे दी। चुनानचे आपके साथ वाले वहाँ रफ़ता रफ़ता जाने भी लगे और ज़्यादातर चले गए। जब मक्का वाले आपके मुख़ालिफ़ीन ने यह देखा तो अब उन्होंने ऐका करके आपकी जान लेने का फैसला कर लिया और रात के वक़्त आपके मकान को आकर घेर लिया मगर आप अपने चचाज़ाद भाई हज़रत अली^{अ०स०} को अपने बिस्तर पर लिटा कर खुद उनके हलके से निकल गए और मदीने की तरफ़ रवाना हो गए। इस वाकिये को “हिजरात” के नाम से याद किया जाता है और इसी से मुसलमानों के हिजरी सन की इब्तेदा होती है।

दुश्मनों ने हिजरात के बाद भी आपको चैन से बैठने न दिया और कई मर्तबा चढ़ाई करके आपको क़त्ल करने आये। मजबूरन आपको कई लड़ाईयाँ लड़नी पड़ीं जिन में बद्र, ओहद, और

अहज़ाब बहुत मशहूर हैं। मगर इन तमाम लड़ाईयों में अबू सुफ़ियान को हर मर्तबा शिकस्त हुई और हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} के हामियों की तादाद और उनकी ताक़त बराबर बढ़ती रही। आख़िर बनी उमय्या की कूवत बिल्कुल टूट गई और अपनी कमज़ोरी को छुपाने के लिये उन्होंने भी कुबूले इस्लाम की नकाब डाल ली मगर मौक़े के मुन्तज़िर रहे कि इस्लाम की ताक़त कुछ भी कमज़ोर हो तो उन्हें अपने गए हुए इक़तेदार (हुकूमत) को वापस लाने का मौक़ा मिले।

हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} की ज़िन्दगी में उनकी इस आरजू के पूरा होने का कोई इम्कान न था मगर उसके थोड़े ही अरसे बाद हज़रत की वफ़ात हो गई और मुसलमानों के निज़ाम में अबतरी (कमज़ोरी) पैदा हो गई। उस वक़्त की हुकूमत की मसलहतों के दुनयवी मसालेह (मसलहतों) ने बनी उमय्या को शाम में अपनी हुकूमत कायम करने का मौक़ा दे दिया जो शुरू में सिर्फ़ एक सूबेदार या गवर्नर की हैसियत से थी मगर रफ़ता रफ़ता उसके इक़तेदार और कूवत में इज़ाफ़ा होता गया। यहाँ तक कि आख़िर में उसने खुद मुख़्तार (आज़ाद) सलतनत की हैसियत हासिल कर ली।

उन लोगों ने शाम के मुल्क में अपना कब्ज़ा जमाते ही हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} के राज़ किये हुए तरीकों और इस्लाम की फैलाई हुई मसावात (बराबरी) को मिटाना शुरू कर दिया और आख़िर में तो यह हालत हुई कि कुरआनी अहक़ाम की एलानिया मुख़ालिफ़त होने लगी।

हज़रत रसूल^{स०अ०} के हकीकी जानशीन जो इस्लामी तमद्दुन व तहज़ीब के मुहाफ़िज़ थे उसको किसी तरह बर्दाश्त न कर सकते थे। जब अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} जो रसूल^{स०अ०} के चचाज़ाद भाई, उनकी आवाज़ पर सबसे पहले लब़्बैक कहने वाले और शुरू से आख़िर तक

इस्लाम की इशाअत में उनके दस्तो बाजू (शाना बशाना) थे मुसलमानों के तख़्ते हुकूमत पर आये तो उन्हें हुकूमते शाम से मुकाबला करना पड़ा और सिफ़ीन की खूँरेज़ लड़ाई हुई मगर अभी हज़रत अली^{अ०स०} का इरादा और काम मुकम्मल नहीं हुआ था कि मस्जिदे कूफ़ा में ऐन हालते सजदा में हज़रत अली^{अ०स०} के सर पर तलवार लगाई गई जिससे आप ने शहादत पाई। हज़रत अली^{अ०स०} के बाद आपके बड़े फ़रज़न्द इमाम हसन^{अ०स०} ने कुछ शराएत का पाबन्द करने के बाद हुकूमते शाम से सुल्ह करली मगर हुकूमते शाम ने उन शराएत की पाबन्दी नहीं की और खुफिया तौर पर ज़हर दिलवा कर उनकी ज़िन्दगी का ख़ातेमा कर दिया। अब पैग़म्बर^{स०अ०} के ख़ानदान में उसूले इस्लाम के तहफ़फ़ुज़ की पूरी ज़िम्मेदारी हुसैन^{अ०स०} पर थी जो हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा^{स०अ०} के दूसरे नवासे और हज़रत अली^{अ०स०} छोटे बेटे थे।

हुकूमते शाम के तख़्त पर अबू सुफ़ियान का पोता यज़ीद बिन मुआविया बैठा जो बड़ा ही शराब ख़्वार और बद-किरदार था और ऐसे अख़लाकी ज़राएम का मुरतकिब (जुर्म करने वाला) होता था जिनका तज़केरा भी तहज़ीब और शाइस्तगी के ख़िलाफ़ है। उसके बावजूद इतने दिन के मज़बूत उमवी इक़तेदार (हुकूमत) की हैबत से अवाम को दम मारने की हिम्मत न थी। वह हुकूमत के जुल्मो सितम से इतना डर गए थे कि ख़ौफ़े खुदा का एहसास बाकी न रहा था।

मगर यज़ीद जानता था कि हिजाज़ के मुल्क में शहरे मदीना के महल्ल-ए-बनी हाशिम के अंदर एक इन्सान है जो मुझसे नहीं डरता सिर्फ़ खुदा से डरता है और वह उसूले इस्लाम का हकीकी मुहाफ़िज़ रसूल^{स०} का नवासा है। वह ख़ामोश सही मगर किया मालूम किस दिन दुनिया की आँखों से ग़फ़लत के पर्दे हट जायें और वह

सच्चाई की तरफ़ खिंच जाये। इस बिना पर यज़ीद को फ़िक्र लाहक़ हुई कि किसी न किसी तरह वह हुसैन^{अ०स०} से बैअत हासिल कर ले। चुनानचे उसने मदीने के हाकिम वलीद बिन अतबा बिन अबी सुफ़ियान को हुक्म भेजा कि हुसैन से बैअत हासिल करो और इस मुआमले में किसी मुराआत (रिआयत) से काम न लो। हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} ने इस पैग़ाम के माना समझ लिये और आप उसे पहले ही से समझे हुए थे।

उसूलन आप के लिए यज़ीद की बैअत करना ग़ैर मुमकिन था। सर का क़लम होना बेशक आसान था मगर हिफ़ाज़ते खुद इख़्तियारी के फ़र्ज़ को अन्जाम देने के बाद जो इस्लामी शरीअत का एक बुनियादी हुक्म है।

इस के लिये हुसैन^{अ०स०} ने तर्क वतन का फ़ैसला कर लिया। आपने अपने तमाम मुतअल्लेकीन (रिश्तेदार) को जिन में औरतें और बच्चे भी थे अपने साथ लिया और मक्के में जाकर पनाह ली। इस तरह आपने यह साबित कर दिया कि आप किसी से जंग करना और अपनी और अपने साथियों की ज़िन्दगी को मोरिज़े ख़तर (ख़तरे) में डालना नहीं चाहते थे बशरतेकि आपको यज़ीद की बैअत पर मजबूर न किया जाता।

मक्का अरब के बैनुल अक़ वामी (International) क़ानून और फिर इस्लाम के रू से एक ऐसा अमन का मक़ाम था जहाँ किसी मुतनफ़िफ़स (शख्स) के लिये ख़तरा न होना चाहिए। मगर फ़रज़न्दे रसूल^{स०अ०} को यहाँ भी अपने क़त्ल का सामान दिखाई दिया। आख़िर अय्यामे हज में कि जब तमाम आलमे इस्लामी मक्के की तरफ़ खिंचा चला आ रहा था हुसैन^{अ०स०} को मक्के से रूख़सत होना पड़ा और आप कूफ़े की तरफ़ रवाना हुए जहाँ के लोग आपको इसरार के साथ बुला रहे थे। और आप से मज़हबी रहनुमाई के तालिब (चाहते) थे और आप

अपने चचाज़ाद भाई मुस्लिम बिन अक़ील को वहाँ के हालात का मशाहिदा (जाएज़ा लेने) करने के लिए भेज चुके थे मगर इस दौरान में कूफ़े की हालत दिगरगूँ (बिगड़) हो गई वहाँ संगदिल हाकिम उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद का इक्तेदार कायम हो गया और मुस्लिम बिन अक़ील शहीद कर डाले गए। उसके बाद कूफ़े जाने का ब—ज़ाहिर कोई मौक़ा न था मगर मक्का और मदीना वापस जाने का भी इम्कान न था। उधर कूफ़े से आपको गिरफ़्तार करने के लिए फ़ौज भेज दी गई जिसने आपको आगे बढ़ने या वापस जाने से रोका। मजबूरन आप करबला की सर ज़मीन पर उतर पड़े। दूसरे ही दिन से यज़ीद का टिड़ड़ी दल लश्कर करबला के मैदान में आना शुरू हो गया। तमाम रास्ते बन्द कर दिये गए और इमाम हुसैन^{अ०स०} को घेर कर यज़ीद की बैअत पर इसरार किया जाने लगा।

हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} के साथ सिर्फ़ आपके सत्तरह अजीज़, चन्द गुलाम और सौ डेढ़ सौ के करीब वह ख़ास दोस्त थे जो कूफ़े या बाज़ दूसरे मक़ामात से बावजूद रास्तों के बन्द होने के किसी न किसी तरह आप तक पहुंच सके थे।

सातवीं मोहर्रम से आप पर और आपके तमाम साथियों यहाँ तक कि छोटे बच्चों पर पानी बन्द कर दिया गया मगर चूँकि अमन पसन्दी हकीकी मानी में आपका शिआरे ज़िन्दगी (ज़िन्दगी का चलन) था लिहाज़ा इतमामे हुज्जत के तौर पर आपने यज़ीदी फ़ौज के अफ़सर उमर बिन सअद के सामने ऐसे शराएत पेश किये जिन से मामलात रू ब—इस्लाह (सुलह) हो जायें। और जंग की नौबत न आये। आप का तरीक़—ए—कार इतना सुलझा हुआ था कि उमर बिन सअद को भी इस बात का कायल होना पड़ा कि हुसैन^{अ०स०} सुलह के रास्ते पर गामज़न हैं। चुनानचे उसने कूफ़े के हाकिम उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के पास

इसी मजमून पर मुशतमिल एक ख़त भेजा मगर इन्हे ज़ियाद को हुकूमत का गुरुर और सलतनत का नशा था। उसने इमाम हुसैन^{अ०स०} को पहचाना भी न था कि वह मुशकिलात का कहाँ तक मुकाबला कर सकते हैं। उसने आपकी सुलह पसन्दी को कमज़ोरी और आजज़ी का नतीजा खयाल करते हुए उमर बिन सअद को लिख भेजा कि हुसैन^{अ०स०} ग़ैर मषरूत (बग़ैर किसी शर्त के) तरीक़े पर इताअत कर लें। जब ही उनकी जान बच सकती है। ग़ैरतदार और फ़र्ज शनास इमाम हुसैन^{अ०स०} के लिए ऐसा मुमकिन न था।

नवीं मोहर्रम की शाम को इस बड़े लश्कर ने आप पर हमला कर दिया मगर आपने एक शब के लिए इलतवाये जंग (जंग टालने) की ख़्वाहिश फ़रमाई जो ब—मुशकिल मन्ज़ूर की गई। आपका मकसद यह था कि आख़री मर्तबा यह पूरी रात इबादते खुदा में बसर कर लें। इसके अलावा दोस्त और दुश्मन दोनों को जंग के क़तई तौर पर तय हो जाने के बाद सोचने का मौक़ा दे दें। दश्मनों पर इतमामे हुज्जत हो जाये और साथियों में से कोई साथ छोड़ कर जाना चाहता हो तो चला जाए आपने आने साथियों को जमा करके साफ़ तौर पर बता दिया कि कल हमारी ज़िन्दगी का फ़ैसला है। मैं तुम से अपनी बैअत की ज़िम्मेदारी हटाये लेता हूँ। तुम इस रात के पर्दे में जिधर चाहो चले जाओ मगर उन जाँबाज़ों ने उस मौक़े से फ़ायदा उठाना नहीं चाहा और एक ज़बान होकर कहा कि हम आपका साथ कभी न छोड़ेंगे। उन लोगों ने जो कहा था वही कर दिखाया।

सामने फ़ौजों का समन्दर लहरें मार रहा था। गिर्दो पेश (चारों तरफ़) वीरानी और बरबादी के सिवा कुछ और नज़र न आता था। अज़ीज़ों, भाईयों, भतीजों, और औलाद के खूबसूरत चेहरे इमाम के सामने थे और आपके साथ पर्दा दार

औरतें और छोटे बच्चे भी मौजूद थे। दरिया पर फ़ौज का पहरा बैठा हुआ था और हुसैन^{अ०स०} और उनके साथियों तक एक क़तर—ए—आब तक के पहुँचने की इजाज़त न थी। बे ज़बान बच्चे प्यास की शिद्दत से बेताब नज़र आ रहे थे मगर ताक़त की तमाम नुमाइशें और ईज़ा रसानी (तकलीफ़ पहुंचाने) की तमाम सूरतें इमाम हुसैन^{अ०स०} और आपके साथियों को मजबूर न कर सकीं कि एक फ़ासिक़ व फ़ाजिर को जाएज़ हुकमरान तस्लीम करें।

दसवीं मोहर्रम को सुबह से दोपहर के बाद तक इमाम हुसैन^{अ०स०} के जाँबाज़ साथी जो आपसे खानदानी तअल्लुक़ (रिश्ता) न रखते थे बराबर अपनी जानें हुसैन^{अ०स०} और आपके उसूल की खातिर कुर्बान करते रहे। जब उन में से कोई बाकी न रहा तो अज़ीज़ों की नौबत आई। इस मौक़े पर आपके लिए आसान होता कि आप खुद आगे बढ़ कर राहे हक़ में अपने सर का हदिया पेश कर देते मगर आपको अपनी कूव्वते बर्दाश्त का पूरा इम्तेहान देना था। चुनौतिये उसके बाद आपके अज़ीज़ आपसे जुदा होने लगे। सबसे पहले आपने अपने जवान बेटे अली अकबर को जो शबीहे पैग़म्बर^{स०अ०} भी थे मरने के लिए भेजा। माँ ख़ैमे में थीं और बाप ख़ैमे के दरवाज़े पर और उनका चाँद फ़ौजे मुख़ालिफ़ की घटा में छुपा था। बाप ने देखा और माँ ने सुन लिया कि अली अकबर तलवारों से टुकड़े टुकड़े हो गए मगर सब्रो सुकून में फ़र्क़ न आया। उसके बाद दूसरे अज़ीज़ भी एक एक कर के रूख़सत हुए और राहे हक़ में निसार हो गए। सबसे आख़िर में आपके जाँबाज़ भाई अब्बास बिन अली^{अ०स०} आपसे रूख़सत हुए। यह हुसैनी जमाअत के अलमदार थे जिनके क़त्ल होने से हुसैन^{अ०स०} की कमर टूट गई मगर हिम्मत शिकस्ता नहीं हुई। उसके बाद आपके पास कोई सरमाया हक़ की बारगाह में नज़्र देने

के लिए न था। मगर सबसे आखिर में आपने एक ऐसा मासूम हृदय पेश कर दिया जिस पर किसी शरीअत और क़ानून की रू से मुजरिम होने का इल्ज़ाम न आ सकता था। वह शीरख़्वार (दूध पीता) बच्चा जो अपनी माँ की गोद में प्यास से सिसकियाँ ले रहा था हुसैन^{अ०स०} ने उसकी हालत देखी और दुश्मन की फ़ौज के सामने अपने हाथों पर लिया, यह था हुसैन^{अ०स०} का सबसे आख़री फ़िदया। इन्सानियत के हाथ पैरों में लरज़ा पड़ गया और रहमो करम की दुनिया में अंधेरा छा गया। जब उस दुश्मन फ़ौज के एक सिपाही ने तीर चिल्ल-ए कमान में जोड़ा और बच्चे की गर्दन को निशाना बनाया। हुसैन का यह आख़िरी तोहफ़ा भी कुबूल हो गया। अब क्या था? ब-ज़ाते खुद हज़रत को हक़ की हिमायत में ज़ेहाद का फ़र्ज़ अन्जाम देना था और अपनी जान की कुर्बानी पेश करना थी। चुनानचे आपने इस शिकस्तगी और बेकसी के आलम में तलवार न्याम से निकाली और जितना क़ानूने इस्लाम की रू से आपको अपना फ़रीज़ा महसूस होता था उस हद तक इन्तेहाई शदीद मुक़ाबला किया। वह मुक़ाबला जो ऐसे हालात में आम इन्सानों की ताक़त से यकीनन बाला तर (पहुँच से बाहर) है। मगर कहाँ एक इन्सानी जिस्म और कहाँ फ़ौलादी तलवारों का सैलाब, जिस्म ज़ख्मों से चूर हो गया। आप घोड़े से ज़मीन पर गिरे और वह मरहला जो आपके लिये पहले ही आसान था अब ज़्यादा आसान हो गया। आपका सर क़लम करके नैज़े पर बलन्द किया गया।

शहीदों की लाशें घोड़ों से पामाल की गईं। मालो असबाब लूटा गया। ख़ानदाने रिसालत की मुक़द्दस ख़्वातीन के सरों से चादरें उतारी गईं। ख़ेमों में आग लगाई गई। मर्दों में एक बीमार व नातवाँ अली बिन हुसैन^{अ०स०} बाकी रह गए थे जिन्हें तौक़ व ज़ंजीर पहनाये गए और अरब के

शरीफ़ तरीन ख़ानदान की ग़ैरत मन्द बीबियाँ असीर करके शहर-ब-शहर फिराई गईं।

यह है दुनिया-ए-तारीख़ का वह बड़ा हादसा जो “वाक़-ए-करबला” के नाम से याद किया जाता है।

यूँ तो आलम का हर वाक़ेया अपने महल्ले वुकूअ (जहाँ वाक़ेया हुआ है) के एतेबार से किसी खास जगह, किसी खास क़ौम और किसी खास तब्क़े से मुतअल्लिक़ होता है और इस लिहाज़ से वाक़-ए-करबला भी इराक़ की सरज़मीन, अरब के मुल्क, हाशिम की नस्ल और मुसलमानों की जमाअत से तअल्लुक़ रखता था मगर वाक़ेयात में हमगीरी और वुसअत पैदा हो जाती है उन खुसूसियात और नताएज के लिहाज़ से जो कुल्ले नौये इन्सानी (पूरी इन्सानियत) से वाबस्ता हों और जिन में मज़हबो मिल्लत की कोई तफ़रीक़ (फ़र्क़) न हो। इस हैसियत से देखा जाता है तो वाक़ये-ए-करबला मुतअद्दिद वजूह (बहुत सी वजहों) से तमाम नौ-ए-इन्सानी (पूरी इन्सानियत) के तअल्लुक़ का मरकज़ (सेन्टर) है।

अव्वल: यह कि ज़ालिम से नफ़रत और मज़लूम के साथ हमदर्दी फ़ितरते बशरी में (इन्सान के नेचर) दाख़िल है। अगर कोई किस्सा हमारे सामने पेश हो जिस में एक तरफ़ जुल्म का मुजाहरा हो और दूसरी तरफ़ मज़लूमियत तो चाहे इस वाक़ेया से मुतअल्लिक़ शख़्सियतों से हम बिल्कुल वाकिफ़ न हों तब भी ज़ालिम से नफ़रत और मज़लूम के साथ हमदर्दी पैदा हो जायगी और उसमें किसी मज़हब व ख़याल का इस्तेयाज़ (फ़र्क़) न होगा। हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} पर जो मज़ालिम करबला में वाक़े हुए उनकी मिसाल तारीख़े आलम में नापैद (मौजूद नहीं) है। यूँ तो अक्सर अम्बिया और मुकर्रबीन (अल्लाह से करीब) अबनाये ज़माना (दुनिया परस्तों) के हाथों मज़ालिम का शिकार हुए। बहुत से बे गुनाह

अफ़राद क़त्ल किये गये। बहुतों का माल व असबाब लूटा गया और बहुत से लोग कैद हुए मगर बहैसियते मजमूई (आमतौर पर) वह तमाम मसाएब जिनका सामना फ़रदन फ़रदन बहुत से अशख़ास (लोगों) को करना पड़ा। हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} की ज़ात में एकट्ठा हो गये। और उन पर ब-वक्ते वाहिद (एक वक्ते में) जमा हो जाने से आपकी ज़ाते मज़लूमियत में अपनी आप मिसाल करार पा गई।

लिहाज़ा जिस क़द्र हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} की मज़लूमियत का दर्जा बलन्द और ज़ालिम के जुल्म का दर्जा शदीद (ज़्यादा) है उसी क़द्र वह हमदर्दी भी कि जो इमाम हुसैन^{अ०स०} के साथ ब-हैसियते मज़लूम होना चाहिए। हर दूसरे मज़लूम से ज़्यादा है और वह नफ़रत भी कि जो आपके दुश्मनों से ब-हैसियते ज़ालिम होना चाहिए तमाम दुनिया के सितमगारों की बनिसबत ज़्यादा है। दुसरे यह कि हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} की मज़लूमियत बेबसी की मज़लूमियत न थी, जिस तरह किसी शख्स पर अकेले जंगल में डाकू हमला कर दें और उसके मालो असबाब को लूट लें। या उसे क़त्ल कर डालें। मज़लूम यह भी है और हमदर्दी इसके साथ भी होगी मगर यह मज़लूमियत ग़ैर इख़्तियारी तौर पर है। इसके साथ कोई अमल ऐसा शरीक नहीं है जो अख़लाकी नुक़्त-ए नज़र से काबिले मदह (तारीफ़) हो। हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} की मज़लूमियत इस नौ (तरह) की नहीं है। आपने एक मसलके (मज़हब) हक़ की हिमायत और एक सही उसूल की हिफ़ज़त के लिए इन तमाम मसाएब को बर्दाशत किया। इसका नाम कुर्बानी है। यूँ तो कुर्बानी के बहुत से अक़साम (किस्में) हो सकते हैं मगर सब में बलन्द जान की कुर्बानी है और अगर इस फ़र्ज़ के आयद (लागू) होने पर कोई इस मन्ज़िल में साबित क़दम नज़र आये तो तमाम अफ़रादे

इन्सानी (लोगों) के नज़दीक ज़्यादा इज़्ज़त व एहतेराम का मुस्तहक़ होगा और जिस क़द्र मक़सद इज़्ज़तदार और शरीफ़ होगा उतनी ही कुर्बानी अहम और काबिले इज़्ज़त समझी जायेगी। करबला की सरज़मीन पर हज़रत हुसैन बिन अली^{अ०स०} ने जो कुर्बानी पश की वह इन्सानी तारीख़ का एक बेमिसाल कारनामा है। हक़ परस्ती और हक़ परवरी की बुनियादेँ मुतज़लज़ल (लरज़) हो रही थीं और ग़ल्बा (ताक़त) व इक़तेदार (हुकूमत) इन्सानी आज़ादी का सर कुचल कर अपनी गुलामी का इकरार ले रहा था। इस नाजुक मौक़े पर हुसैन^{अ०स०} ने अपने को और अपने अज़ीज़ों बल्कि बच्चों तक को मैदाने जेहाद में ला कर ज़ब्रो इस्तिबदाद (जुल्म) का पर्दा चाक कर दिया और सिबातो इस्तेक़लाल (साबित क़दमी) ज़ब्तो सब्र (बर्दाशत), ईसारो कुर्बानी, हक़ परवरी और रास्त किरदारी (नेक राह) का बहुत बलन्द नमूना पेश किया। इस लिहाज़ से हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} किसी कौम और मज़हब से मख़सूस नहीं समझे जा सकते। हुसैन^{अ०स०} का तअल्लुक़ तमाम दुनिया-ए-इन्सानियत से है। आपने वह काम किया जिसने इन्सानियत के मिटते हुए नुक़श (निशान) को फिर से उभार दिया और दम तोड़ती हुई इन्सानियत को नये सिरे से ज़िन्दा कर दिया। आपने दुनिया-ए-इन्सानियत को वह पैग़ाम दिया जो ज़िन्दा है और हमेशा ज़िन्दा रहेगा। आपने दुनिया को सच्चाई और रास्त बाज़ी (नेक राह) की सही क़द्रो कीमत का अन्दाज़ा कराया और उस मौत के मानी समझाये जिसमें दवामी ज़िन्दगी (हमेशा की ज़िन्दगी) की हकीक़त मुज़मर (छिपी) है। इसलिये तमाम अक़वामे आलम (सारी कौमें) जो कुर्बानी की इज़्ज़त करती हैं मजबूर हैं कि हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} को इन्तेहाई क़द्रो मन्ज़िलत की निगाह से देखें।

तीसरे यह कि हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} का मक़सद अपनी कुर्बानी से कोई ऐसा अम्र (चीज़) न था जो मुख़तलिफ़ मज़ाहिब के नुक़्त-ए-नज़र (नज़रिये) से महल्ले इख़्तेलाफ़ हो। इन्सानो औसाफ़ (सिफ़त) व इख़्लाक़ की एक मन्ज़िल वह है जहाँ तमाम मज़ाहिब (धर्म) मुत्तफ़िक़ (एक) हो जाते हैं। तमाम मज़ाहिब की अस्ल असास (बुनियाद) जिस पर उनकी इमारत बलन्द की गई है अख़लाक़े इन्सानो को नुक़्त-ए-इस्तेफ़ा (बलन्दी के केंद्र बिंदु) तक पहुंचाना है। यह और बात है कि ज़माने के एख़्तेलाफ़ से कुछ अहक़ाम (क़ानून) में अमदन (जानबूझ कर) तबदीलियाँ की गई हों और बाज़ मज़ाहिब के उसूल में बाद की आने वाली नसलों की ना समझी से कुछ ज़्यादाती या कमी हुई हो मगर अस्ली महवर (सेन्टर) सबका तहज़ीबे इख़्लाक़ और तकमीले बशरियत (मानवता की पूर्ति) है। हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} का मक़सद यही नुक़्त-ए-मुशतरक़ (यही एक बात सबसे अलग थी) था। यकीनन अगर हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} का मुक़ाबला किसी दूसरे दीन व मिल्लत के अफ़राद से हुआ होता यानी कोई ग़ैर मुस्लिम जमाअत आपके सामने होती तो चाहे आपकी कुर्बानी कितनी ही हक्क़ानियत (सच) पर मबनी होती और आपको कितने ही जुल्म के साथ शहीद किया गया होता मगर वह मज़हबी जमाअत जिसके मुक़ाबले में आप थे और जिसके हाथों आपको यह मज़ालिम बर्दाश्त करना पड़े थे किसी हद तक आपके नाम और आपके काम से बिनाये मुख़ासिमत (दुश्मनी) ज़रूर महसूस करती और वाक़य-ए-करबला के साथ हमदर्दी में उमूमियत (आम लोगों में) पैदा न होती लेकिन हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} की कुर्बानी रसमी तौर पर किसी एक मज़हब को मिटाने और दूसरे मज़हब को कायम करने के लिए नहीं थी बल्कि एक ही दीन के ज़ाहरी मानने वालों में बुराईयों को मिटाने और

अच्छाईयों के कायम करने के लिए अमल में लाई गई थी और चूँकि बुराई और अच्छाई के मुतअल्लिक़ उसूली हैसियत से मज़ाहिब में कोई एख़्तेलाफ़ नहीं पाया जाता। यानी हर मज़हब के नज़दीक़ बुराईयाँ मिटाने के काबिल और अच्छाईयाँ कायम करने की मुस्तहक़ हैं इसलिये हर मज़हब के लोगों को हुसैन^{अ०स०} के मक़सद से इत्तेफ़ाक़ होगा और वह आपकी कुर्बानी को इज़्ज़त व एहतेराम का मुस्तहक़ समझेंगे।

चौथे हज़रत इमाम हुसैन^{अ०स०} और उनके साथियों ने वाक़ेय-ए-करबला के दौरान में मुख़तलिफ़ अख़लाक़ व औसाफ़े कामिला (तमाम सिफ़तों) की जो मिसालें पेश कीं हैं वह आम्म-ए-ख़लाएक़ (लोगों) के लिए एक दायमी (हमेशा) दर्से अमल की हैसियत रखती हैं जिससे तमाम अफ़रादे बशर यक़साँ तौर पर फ़ायदा उठा सकते हैं।

उन ही तमाम वजूह का नतीजा यह है कि दुनिया ने वाक़ेय-ए-करबला के साथ अपने बाहमी तफ़रक़ा (आपसी इख़्तिलाफ़) और ज़ब्ज़ात की कशमक़श के बावजूद यग़ानगी (एकता) का बर्ताव किया और अक़वामे आलम ने यक़साँ तौर पर उसकी अहमियत का एतेराफ़ व इक़रार किया और सदियाँ गुज़रने के साथ उनकी दिलचस्पी इस अहम हादसे से न सिर्फ़ कायम रही बल्कि मुख़तलिफ़ अवक़ात (वक़्तों) में इसमें इज़ाफ़ा होता रहा।

अगर कोई सय्याह (सैलानी) मोहर्रम के ज़माने में शेकों गरबे आलम की सय्याहत (सैर) करे और हर मर्तबा मोहर्रम के पहले दस दिन एक नये ख़ित्त-ए-ज़मीन (मुल्क) पर गुज़ारे तो वह देख लेगा कि हर जगह अपने अपने मेयारे ज़िन्दगी और तर्ज़े मआशिरत (समाजी ज़िन्दगी) के एतेबार से किसी न किसी तरह करबला के शहीद को याद किया जाता है।

यह सालाना यादगार जो अज़ादारी के मुख़्तलिफ़ मरासिम (रसमों) की शक़ल में मनाई जाती है करबला के वाक़ये के बाद पहली ही सदी में मुसलमानों ने कायम कर ली थी और उसके हल्क़-ए इशाअत (फ़ैलाओ) में बराबर इज़ाफ़ा होता रहा।

हालाँकि इन्सान फ़ितरतन ख़शी को पसन्द करता है और रंजो ग़म से भागता है। इसलिये अगर ज़माने के हादसों के मातहत ग़म के असबाब पैदा भी होते हैं तो उनको भुलाने की कोशिश करता है। यही वजह है कि अक़वामे आलम (दुनियावी क़ौमों) में जितने त्योहार हैं वह सब खुशी की यादगार हैं। ग़म की यादगारें कभी कायम नहीं की गईं यह सिर्फ़ हुसैन मज़लूम की शहादत है जिसकी यादगार ग़म की सूरत में सदहा साल (सैकड़ों साल) से बराबर कायम है। जाहिर है कि फ़ितरते इन्सानी (नेचर) किसी बार को अरसे तक बर्दाशत नहीं कर सकती। इस ग़म की यादगार का इस तरह बरक़रार रहना इस अम्र (हुक्म) की दलील है कि वाक़ेय-ए करबला की याद में इन्सानी ज़िन्दगी के लिये नफ़ा बरख़्श (फ़ायदेमन्द) अनासिर मुज़मर (चीज़ें छुपी हुई) हैं।

फिर यह भी एक हकीक़त है कि हमेशा हाल का नक्श माज़ी (पॉस्ट) को फ़रामोश बना कर उसके असर को ख़त्म कर देता है। लेकिन इसके बरख़िलाफ़ वाक़ेय-ए-करबला की यादगार इस शिद्दत के साथ कायम रहना कि हाल का कोई वाक़ेया इस पर असर अन्दाज़ न हो सके। यह मानने पर मजबूर करता है कि तारीख़े आलम इसके बाद से इस वक़्त तक कोई नज़ीर इसकी पेश नहीं कर सकी।

बावजूदेकि वाक़ेय-ए-करबला के बाद कितने ही इन्केलाब हुए। तमद्दुन (तहज़ीब) ने कितनी ही करवटें बदलीं। मेयारे अख़लाक़ में कितने ही

तग़ैय्युरात (बदलाव) हुए मगर हुसैनी कुर्बानी की याद मुसलसल तेरह सौ बरस से यक़सॉ इज़्ज़त व एहतेराम के साथ कायम है। मानना पड़ेगा कि वह कुर्बानी ऐसे मुशतरक इन्सानी उसूल की हिफ़ज़त के लिए की गई है कि जब तक दुनिया में इन्सानियत कायम है इस उसूल की भी क़द्रो मन्ज़िलत है और इस यादगार कुर्बानी की याद भी बरक़रार (बाकी) है।

खुली हुई बात है कि जितना कोई मौजू (सबजेक्ट) अहम होगा और तारीख़ी हैसियत से जिस क़द्र किसी वाक़ये में नुदरत (ब्यूटी) और अहमियत ज़्यादा होगी उसी क़द्र अहले फ़िक़्रो क़लम तबा आज़माई (काम) ज़्यादा करेंगे। इसी का नतीजा है कि दुनिया की तारीख़ में करबला के वाक़ये से बढ़कर किसी वाक़ये से मुतअल्लिक़ नज़मो नस्र शाएरी और तहरीरों (Prose and poetry) का ज़ख़ीरा फ़राहम नहीं हुआ।

करबला की ज़मीन पर अभी खूने शहीदों की तरी खुशक न होने पाई थी कि शायरों की ज़बान से इस वाक़ये के मुतअल्लिक़ अशआर तराविश (कहने लगे) करने लगे और नस्र (Prose) में उन खुतबों से क़तए नज़र (हटकर) करते हुए जो अहलेबैतु हुसैन^{अ०स०} की ज़बान या दूसरे मुक़र्ररीन (स्पीकर) के दहन से हंगामी हालात के मातहत निकले हैं खुसूसन उन एक़दामात के ज़ैल में जो इमाम हुसैन^{अ०स०} के खून का बदला लेने के लिए सुलैमान बिन सुरदे खेज़ाई और फिर मुख़्तार की जानिब से हुए थे जिनका मक़सद ही यह था कि लोगों को वाक़ेय-ए-करबला की अहमियत से मुतअस्सिर किया जाये। मुस्तक़िल तौर से इस वाक़ये पर तसानीफ़ (बुक्स) की इब्तेदा पहली सदी हिजरी के अवाख़िर (आख़िर) से हुई और उसके बाद बराबर मुअररेख़ीन (इतिहास कार) वाक़ेय-ए-करबला पर मक़ातिल लिखते रहे और तसानीफ़ (किताबों) का सिलसिला जारी हो गया

और यह वाक्या है कि दुनिया कि है किसी दूसरे मौजू पर इतना नहीं लिखा और कहा गया जितना वाक्य—ए—करबला के मुतअल्लिक लिखा और कहा जा चुका है, फिर भी मौजू तश्ना है और बहुत कुछ समझने और समझाने की ज़रूरत बाकी है। इसके अलावा अब तक जितनी किताबें लिखी गई हैं उनका अन्दाज़े बयान ज़्यादा तर मज़हबी मोतकेदात (अकीदे)¹ से वाबस्तगी रखने वाले अफ़राद के मज़ाक़ (ज़ौक़) के मुताबिक़ है जिससे अक्सर ग़ैर मज़ाहिब के अफ़राद अजनबियत महसूस करते हैं। कोई नावाकिफ़ और अजनबी षख्स अगर वाक्य—ए—करबला और इमाम हुसैन^{अ०स०} की शख्सियत को आलमे असबाब (सबब) की तारीख़ी रफ़्तार और उसके नताएज और उनके ज़रूरी तफ़सीलात के साथ जनना चाहे तो उसकी तश्नगी दूर करने के लिए कोई एक किताब ऐसी जामे (मुकम्मल) नहीं है जिसका पता दिया जा सके। ज़ेरे नज़र किताब इस ज़रूरत को सामने रख कर लिखी जा रही है और इस मौक़े पर जबकि दुनिया—ए—इन्सानियत के इस अज़ीम वाक्ये को पूरे तेरह सौ बरस हो गए हैं और हर मज़हबो मिल्लत के अफ़राद ने मुत्तफ़िक़ (एक) हो कर हुसैन बिन अली^{अ०स०} की सीज़दह सद साला (तेरह सौ साल) यादगार कायम की है। यह किताब इस सदी की यादगार के तौर पर हक़, इन्साफ़, और सच्चाई की बारगाह में हुरियत, मसावात (बराबरी) और ईसार की बारगाह में, इन्सानी दिल, दिमाग़, और ज़मीर की बारगाह में इन्सानी जज़्बात, एहसासात और शरीफ़ाना खयालात की बारगाह में, इन्सानी वक़ार, इज़्ज़त और इफ़तेख़ार की बारगाह में, इन्सानी फ़िक़्र, नज़र और किरदार की बारगाह में और इन सबके जरिये से उनके परवरदिगार की बारगाह में पेश की जाती है।

हुसैन इब्ने अली^{अ०स०} के कारनाम—ए—जावेद की कद्रो कीमत का सही अन्दाज़ा तो अलफ़ाज़ की महदूद दुनिया के बस से बाहर है लेकिन अगर

इस पूरी किताब में एक जुमला भी इस ईसार व कुर्बानी की तस्वीर का कोई रूख़ आँखों के सामने ला सके तो यही इस ख़िदमत का पूरा माहसल (निचोड़) होगा।

अली नकी अन—नक़वी,..... (जारी)

‘इमाम की शान क्या होती है? इस बारे में जो शख्स मज़हबे शिया के मोतकेदात (अकीदे) मालूम करना चाहे उसे अरबी में उसूले काफ़ी और उसके शुरुह, फ़ारसी में हक्कुल यकीन अल्लामा मज़्लिसी (मुतवफ़्फ़ी 1111 हिजरी) और हदीक़—ए सुलतानिया मुसन्नफ़ जनाब सय्यदुलउलमा सय्यद हुसैन (मुतवफ़्फ़ी 1273 हिजरी) और उर्दू में मज़क़ूरा किताबों के तरजुमे की तरफ़ रुजू करना चाहिये। मुख़्तसर तौर पर उसूले मज़हबे शिया के समझने के लिए खुद मेरी वह तसानीफ़ (किताबें) देखना मुनासिब होंगी जो इमामिया मिशन से शाये हुई हैं।)

पहली मजलिस

शाएरे अहलेबैत अल्लामा नज़्म आफ़न्दी

भर दिया जोशे अमल इस्लाम की तलवार में या हुसैन इब्ने अली का शोर है झनकार में फ़ातेमा की गोद का पाला जगाकर कौम को सो रहा है करबला की मन्ज़िले बेदार में सुबहे आशुरे मुहर्म्म सर जो सजदों से उठे हंस दिए अहले वफ़ा मुंह देखकर तलवार में कब हुआ था नहर पर ठंडा पयम्बर का निशँ अब तक उठते हैं अलम यादे अलम बरदार में मुसकुराए ज़ेरे तेग़ अपनी हुकूमत देखकर दोनों आलम थे निगाहे सय्यदे अबरार में दर्द था उम्मत का जो जंजीरे आहन बन गया थी यही जंजीर पाए आबिदे बीमार में क्या ख़बर थी जिनके सजदों ने हिला दी है ज़मी उनके सर तशहीर होंगे कुचओ बाज़ार में जब सरे शब्बीर आया झुक गई चश्मे यज़ीद कुफ़्र ने सजदे किए ईमान की सरकार में दुश्मनों को भी रुलाया खुद भी रोए अहलेबैत पहली मजलिस की अमीरे शाम के दरबार में फ़ैजे मददाही ने लफ़्ज़ों को अता की जिन्दगी इक हकीक़त इक तड़प है नज़्म के अशआर में

हकीकते दीन

किस्त -9

मुफ़विकरे इस्लाम डॉ० मौलाना सै० कल्बे सादिक़ साहब किब्ला

“हज में इत्तेहाद का अजब
नज़ारा”

मस्जिद अल्लाह की होती है। मस्जिद न शिया की है, न सुन्नी की है, न देवबन्दी की है और न बरैलवी की है। मुल्लाओं ने उसे तक्सीम कर दिया, ये अलग बात है लेकिन मस्जिद का हुक्म क्या है? देखिए इख़्तेलाफ़ (Difference) की जितनी किसमें हो सकती हैं चाहे वह रंग का इख़्तेलाफ़ होता है सही हो या ग़लत इस से मुझे मतलब नहीं मैं तो इख़्तेलाफ़ पेश कर रहा हूँ सय्यद, मुग़ल पठान का इख़्तेलाफ़ होता है। कि कोई काला हो या गोरा। मुल्कों का इख़्तेलाफ़ होता है। नस्लों का इख़्तेलाफ़ होता है। खानदानों का इख़्तेलाफ़ होता है। हिन्दुस्तानी और पाकिस्तानी का इख़्तेलाफ़ होता है। दौलतमन्द और गरीब का इख़्तेलाफ़ होता है। ज़बान का इख़्तेलाफ़ होता है कि कोई पंजाबी बोल रहा है और कोई सिंधी लेकिन जब आप आप अल्लाह के घर में आ गये तो सारे इख़्तेलाफ़ खत्म। अब आका और गुलाम एक ही सफ़ में। काला और गोरा एक ही सफ़ में। मुख़्तलिफ़ मुल्कों के लोग एक ही सफ़ में। मुख़्तलिफ़ ज़बाने बोलने वाले एक ही सफ़ में। सब एक ही सफ़ में खड़े होकर एक ही ज़बान बोल रहे हैं जिसका नाम है 'अरबी'। एक इमाम के पीछे सफ़ें खड़ी हैं। कोई फ़र्क़ नहीं है। जो सफ़ में आकर पहले खड़ा हो गया, वही उसकी जगह है। आप उसको हटा नहीं सकते हैं, लेकिन शरीयत ने यह बात ज़रूर कही है कि इमाम के बिल्कुल पीछे दो तीन ऐसे लोग होने

चाहिए कि जो नेक हों, मुत्तकी हों, दीन के मसायल से वाकिफ़ हों, जिनकी किरअत सही हो। क्यों? किसी बलन्दी के लिए नहीं बल्कि इमेरजन्सी (Emergency) के लिये। खुदा न करे अगर इमाम को हार्ट अटैक हो गया तो कोई न कोई Alternate Arrangement तो होना चाहिये है। खुदा न करे इमाम को कुछ हो गया तो बिला फसल इनमें से कोई इमाम की जगह आ जाये। उम्मत की बात तो आप जाने दीजिये, जमाअत भी एक सेकण्ड बगैर इमाम के न रहे।

इसके बाद जब आप हज करने के लिये तशरीफ़ ले गये तो हज के मैदान में कौन नहीं है? है शिया में ये हिम्मत कि वो कह दे कि सुन्नी हज करने के लिये नहीं आ सकते हैं। है सुन्नियों में यह दम कि वो कहें कि शिया हज करने के लिए नहीं आ सकते। शिया—सुन्नी वहां मौजूद, बरैलवी वहां मौजूद, देवबन्दी वहां मौजूद, काले वहां मौजूद, गोरे वहां मौजूद। इन्डोनेशिया से लेकर अमेरिका तक रहने वाले, अलग अलग ज़बानें बोलने वाले, अलग—अलग कल्चर वाले अलग—अलग सूरतें मगर जब अल्लाह के घर में आ गये तो सब का लिबास एक, सब का किब्ला एक और सब एक साथ नमाज़ पढ़ रहे हैं। सारी तफ़रिक् (Differenation) खत्म हो गये, ज़बान के तफ़रिक् खत्म हो गये, मसलक के तफ़रिक् खत्म हो गये। क्यों खत्म हो गये? इसलिये कि हज के वक्त मुसलमानों को कुछ याद नहीं है। अल्लाह का घर (काबा) नज़रों के सामने है। बस मुश्किल ये होती है कि इन्सान जब काबे में नमाज़ पढ़ता है तो रुख़ अल्लह की तरफ़ होता

है और जब वहां से निकल कर बाहर आता है तो उसका रुख तब्दील हो जाया करता है। अगर वहां से ये तालीम लेकर चलें कि हमेशा—हमेशा हमारा रुख अल्लाह की तरफ होना चाहिये है तो जो इत्तेहाद वहां पैदा होता है, वही इत्तेहाद पूरे आलमे इस्लाम में हमेशा—हमेशा के लिये पैदा हो जायें

“हुकूमत मुसलमानों लड़वाने वाले मुल्लाओं की सिक्योरिटी वापस ले ले”

डरते—डरते मैं एक तजवीज़ पेश कर रहा हूं। मैं परदेसी आदमी, मेझे तजवीज़ पेश करने का हक क्या है? मगर मैं पाकिस्तान की हुकूमत के सामने एक तजवीज़ रखना चाहता हूं। उलेमा की बात नहीं कर रहा हूं। उलेमा चाहे शिया हों या सुन्नी हों मुक़द्दस हैं। जो उलेमा हैं, स्कालर्स हैं, वो कभी लड़ाने की बात नहीं करेंगे। वो गुप्तगू (Discussion) तो करेंगे लेकिन ये नहीं कहेंगे कि ‘मारो’। वो जो कहते हैं कि ज़बान और क़लम से काम न लो बल्कि ‘क्लाशनकोव’ से काम लो। उनके लिये मेरी छोटी सी तजवीज़ है कि उनको इन्सानों को क़त्ल कराने में तो दिलचस्पी होती है मगर ‘शहीद’ होने के लिये कोई तैयार नहीं होता है। भई, शहादत तो बहुत बड़ा मरतबा है। आप दूसरों से कहते हैं कि खुदा की राह में शहीद हो जाओ तो सदरे इस्लाम में क्या होता था? रसूल (स०) सबके आगे—आगे रहते थे। आप इस्लाम की तारीख पढ़ कर मुझे बतायें कि क्या रसूल (स०) के साथ गार्ड्स (Guards) कभी रहते थे? मौला अली(अ०) के साथ गार्ड्स (Guards) कभी रहते थे? तो मेरी मुख़्तसर सी तजवीज़ ये है कि जो हज़रात ‘कठमुल्ला’ है, चाहे उनका तअल्लुक किसी भी फिरके से हो, हुकूमत उनसे गार्ड्स (Guards) को हटा ले और उनको

प्राइवेट गार्ड्स (Private Guards) रखने की भी इजाज़त न दे तो इन्शाल्लाह सारे मसायल खुद हल हो जायेंगे। या तो वो सीधे हो जायेंगे और या तख़्त—ए—गुस्ल उनको सीधा कर देगा। मैं सीधी सादी बात आप को बताये देता हूं कि ये सारी प्राबलम (Problem) इसी लिये है कि उनको ये मालूम है कि दूसरों की जान खतरे में है, लेकिन अलहम्दो लिल्लाह हमारी जान खतरे में नहीं है। जब उनकी अपनी जान भी खतरे में आयेगी तो उनको दूसरों की जान की क़द्र होगी।

“अल्लाह खौफ़ की पैदावार नहीं”

मेरे अजीज़ो! मैं आप को बताना चाहता हूं कि कोई ऐतराज़ अल्लाह के वजूद पर चाहे वो बरट्रेन्ड रसल का ऐतराज़ हो या प्रोफेसर हाकिन्स का या किसी और का ऐतराज़, आप नहीं दिखा सकते जो रसूल (स०) के ज़माने में या आइम्मा—ए—मासूमीन (अ०) के ज़माने में न किया गया हो। आज अल्लाह के वजूद पर जो ऐतराज़ किये जा रहे हैं वो नये नहीं हैं, बल्कि उनके जवाबात दिये जा चुके हैं। खाली ज़बान (Language) का फर्क है, लिबास बदला हुआ है। रसल कहता है कि मैं ईसाई (Christian) क्यों नहीं हूं? बहुत सी बातें उसने कही हैं। एक बात उसने कही है कि खुदा खौफ (Fear) की पैदावार है। इन्सान बिजली से डरा, ज़लजले से डरा, आंधी से डरा, किसी भी चीज़ से डरा और उसको इस डर के लिए एक सहारे की तलाश थी तो उसने खुदा को गढ़ लिया यानी खुदा ने इन्सान को नहीं बनाया है बल्कि इन्सान ने खुदा को बनाया है। ये कोई दलील है? ये कोई Argument है? मैंने अर्ज किया था कि बड़ों की ग़लतियां भी बड़ी हुआ करती हैं।

“इमाम जाफ़रे सादिक (अ०) का अल्लाह के वजूद को साबित करना”
बरट्रेन्ड रसल ने कहा कि खुदा खौफ की

पैदावार है। रसल की बात याद रखियेगा कि इन्सान के खौफ से अल्लाह पैदा होता है। इमाम जाफरे सादिक (अ०) के दौर में एक इन्सान आया जो मुलहिद (नास्तिक) था। वो अल्लाह को नहीं मानता था।

आकर इमाम के पास बैठा। इमाम ने मोहब्बत से उसे बिठाया लेकिन उसने कहा कि आप जितनी भी मुझ से मोहब्बत करें, मैं अल्लाह को मानुंगा नहीं। इमाम ने फरमाया, नहीं मानों, कोई बात नहीं? बस मुझे एक बात का जवाब दे दो। उसने कहा किस बात का जवाब? इमाम ने फरमाया कि तुमने कभी समन्दर (Sea) का सफर किया है? उसने कहा, हां एक बार किया तो है। इमाम ने पूछा कि क्या ऐसा तो नहीं हुआ था कि कश्ती (Ship) तुम्हारी तूफान में फंसी हो? उसने कहा, हां हुआ था। इमाम ने पूछा कि क्या ऐसा तो नहीं हुआ था कि तूफान इतना शदीद (सख्त) हो कि नाखुदा ने कहा हो कि अब बचने की कोई उम्मीद नहीं रह गयी? उसने कहा कि हा, ऐसा ही हुआ था। फरमाया जरा गौर करके बताओ कि जब तुम को यकीन था कि अब बचने की कोई उम्मीद नहीं है और मेरी कश्ती डूब कर रहेगी, उस वक्त भी तुम्हारे दिल में कहीं दूर पर यह ख्याल मौजूद था कि अब भी कोई चाहे तो बचा सकता है। उसने गौर करके कहा कि बात तो सही है। उस वक्त भी मेरे दिल में ये ख्याल था कि इस वक्त भी अगर कोई चाहे तो मुझे बचा सकता है। इमाम ने फरमाया बस वही कोई खुदा है। इमाम ने अपने जवाब से बता दिया कि खुदा खौफ की पैदावार नहीं है बल्कि जब इन्सान की मायूसियां शऊर से सारे परदे हटा देती है तो 'अलस्तो' का इकरार 'तहतुश शऊर' से उभर कर शऊर की मंजिल में आता है और इन्सान को भूला हुआ 'अल्लाह याद' आ जाता है।

वो थोड़ी देर तो खामोश रहा उसके बाद कहने लगा 'अश्हदो अन ला इलाहा इल्लाह'।

क्या बात हो गई? क्यों वो अल्लाह का कायल हो गया? रिवायत तो इतनी ही है जितनी मैंने आपके सामने पढ़ी है लेकिन मेरा दिल कहता है कि उसने सोचा होगा कि गुज़री तो थी सब मेरे ऊपर लेकिन इनको (इमाम को) कैसे इसकी खबर हो गयी? मैं दूसरे शहर का रहने वाला, पहली मरतबा इनके पास आया हूँ लेकिन जो कुछ मुझ पर गुज़री, उसकी इनको कैसे खबर हो गई और न सिर्फ वाकये की खबर हुयी बल्कि दिल के खयालात की भी खबर हो गयी। ये कौन सी ताकत थी जिसने इनको सब बता दिया। समझ गया कि ये ताकत अल्लाह की ताकत थी।

“दीन और दुनिया, दोनों को लेकर चलो”

दूसरी बात जो बरट्रेण्ड रसल ने कही, उसका जवाब इमाम ने नहीं दिया बल्कि इमाम के एक शागिर्द ने दिया। रसल अपनी किताब में लिखता है कि 'मज़हब हम को दो नुकसानों में से एक नुकसान के बीच में फंसा देता है यानि मज़हब कहता है कि दुनिया में सुकून उठाना है तो दुनिया में मुसीबतें बरदाश्त करो। मैं रसल से कहना चाहता हूँ कि भाई, इस्लाम ये नहीं कहता है। इस्लाम तो आखिरत में मुसीबतें सहो और आखिरत में सुकून उठाना है तो यह कहता है कि वह हम में से नहीं कि जो दुनिया को आखिरत के लिए छोड़ दे या आखिरत को दुनिया के लिए छोड़ दे। एक हाथ में दीन हो दूसरे हाथ में दुनिया हो। यहां भी कामयाबी, वहां भी कामयाबी। रसल का जवाब किसने दिया? एक दीवाने ने कि जिसकी दीवानगी पर सैकड़ों ज़हीनों की ज़ेहानतें निसार। 'बहलोल दाना' रसल का जवाब दे रहे हैं। रसल क्या कहता है? रसल कहता है कि हमारे लिये मुश्किल ये है कि अगर हम मज़हब को इख्तेयार करें तो मज़हब कहता है कि अगर आखिरत में तकलीफ उठाना है तो दुनिया में सुकून उठा लो,

(बकिया पेज नं० 18 पर)

मुख्य समाचार

इस्राईल का हिज़बुल्लाह को अपने लिए सबसे बड़ा ख़तरा समझना हमारे लिए फ़ख़ की बात है: सय्यद हसन नसरुल्लाह

अहलेबैत न्यूज़ एजेन्सी अबना के मुताबिक़ हिज़बुल्लाह के सरबराह सय्यद हसन नसरुल्लाह ने इस्तेक़ामती तहरीक के कमान्डरों और रहनुमाओं की शहादत की बरसी की मुनासिबत से एक प्रोग्राम को ख़िताब करते हुए इमाम खुमैनी रहमतुल्लाह अलैह के इनक़ेलाबी इक़दामात को ख़िराजे अक़ीदत पेश किया और रहबरे इनक़ेलाब इस्लामी, ईरानी हुक्काम और अवाम को ईरान के इस्लामी इनक़ेलाब की कामियाबी की सालगिरह की मुबारक बाद पेश की। हिज़बुल्लाह के सिक्रेटरी जनरल ने जुमेरात की शाम हिज़बुल्लाह के कमान्डरों और रहनुमाओं मिन जुमला सय्यद अब्बास मूसवी, शेख़ राग़िब हर्ब और अमाद मुग़निया की शहादत की बरसी की मुनासिबत से मुनाकिदा प्रोग्राम में कहा कि इस प्रोग्राम के इनेक़ाद का मक़सद मौजूदा नस्ल और आईन्दा नस्लों को, उन हकीकी रहनुमाओं से आशना कराना है कि जिन्होंने कामियाबी के लिए फ़िदाकारी का मुज़ाहिरा किया और जिन्होंने सब्र व इख़लास के साथ दुश्मानों के ख़िलाफ़ भरपूर जंग की। उन्होंने इस्राईल के मौकिफ़ की जानिब इशारा करते हुए कहा कि ऐसा लगता है कि अमरीका में ट्रम्प के आने के बाद हिज़बुल्लाह के सिलसिले में इस्राईल का मौकिफ़ और ज़ियादा सख़्त हो गया है और यह गासिब हुक्ूमत, हिज़बुल्लाह को अपने लिए सबसे बड़ा ख़तरा समझती है जबकि यह, हिज़बुल्लाह के लिए फ़ख़ की बात है। उनका कहना था कि हिज़बुल्लाह, इस्राईल और अमरीका से नहीं डरती। सैय्यद हसन नसरुल्लाह ने कहा कि इस्राईल की धमकियां कोई नई बात नहीं और ऐसा लगता है कि इस्राईल का मक़सद लेबनानी अवाम और ख़ास तौर पर हिज़बुल्लाह पर दबाव डालना हैं उन्होंने कहा कि बाज़ अरब मुमालिक, लेबनान पर सहयूनी हुक्ूमत की जंग के अख़राजात भी इस्राईल को देने के लिए तैयार हैं और जिस अरब मुल्क ने 2006 ई. में लेबनान पर इस्राईल की जंग मुसल्लत करने में सैहूनी हुक्ूमत की मदद की थी, उसके इस इक़दाम के सुबूत आज हर दौर से ज़ियादा पुख़्ता हैं। उन्होंने कहा कि बाज़ अरब मुल्कों की तरफ़ से इस्राईल के लिए इस तरह की हिमायत के बा वजूद वह जंग में कामियाब नहीं हो सकेगा। हिज़बुल्लाह के सिक्रेटरी जनरल ने कहा कि उस वक़्त इस्राईल के लिए लेबनान या ग़ज़ा पर जंग मुसल्लत करने से कहीं ज़ियादा यह बात अहम है कि क्या वह इस जंग में कामियाब हो सकेगा और सहयूनी हुक्ूमत के मक़ासिद पूरे हो सकेंगे? सय्यद हसन नसरुल्लाह ने कहा कि हिज़बुल्लाह की ताक़त और उसकी मक़बूलियत और लेबनान के सदर मीशल औन का मोहकम व उस्तवार मौकिफ़, लेबनान की अस्ल ताक़त है।

पश्चिमी मूसल का बाख़ीरा गाँव दाइश के नापाक वुजूद से पाक

अहलेबैत न्यूज़ एजेन्सी अबना की रिपोर्ट के मुताबिक़ इराकी फ़ोर्सज़ ने मूसल के पश्चिमी इलाक़े को वहाबी दहशत गर्दों के नापाक वुजूद से पाक करने के लिए आप्रेशन का आगाज़ कर दिया है। इराकी सेना ने मगरिबी मूसल के गाँव को दाइश के नापाक वुजूद से पाक कर दिया है। सूचना के अनुसार इराकी फ़ोर्सज़ ने मूसल के मगरिब में स्थित बाख़ीरा गाँव को दाइश के कब्ज़े से छुड़ा लिया है। इत्तेलाआत के मुताबिक़ इराकी वज़ीरे आज़म हैदरुल एबादी ने मगरिबी मूसल को आज़ाद कराने का फ़रमान सादिर कर दिया है। हैदरुल एबादी ने कहा है कि इन्सानों की वहाबी वहाशी दरिन्दों से आज़ादी हर आज़ादी पर मुक़द्दम है। इत्तेलाआत के मुताबिक़ एक माह कब्ल इराकी फ़ोर्सज़ ने मशरिकी मूसल को वहाबी दहशत गर्द तन्जीम दाइश के नापाक वुजूद से पाक करा लिया था। बहुत से दहशत गर्द मशरिकी मूसल से मगरिबी मूसल फ़रार हो गए थे।

यहूदियों से हमारी जंग हमेशा जारी रहेगी: लेबनान के सुन्नी आलिमे दीन

अहलेबैत न्यूज़ एजेन्सी अबना के मुताबिक लेबनान की उलमाए इस्तेकामत यूनियन के सरबराह शेख माहिर हुमूद ने इस बात की जानिब इशारा करते हुए कि गासिब यहूदियों से हमारी जंग हमेशा जारी रहेगी कहा कि अरब हुक्मरानों की जानिब से सहयूनी दुश्मनों से दोस्ताना ताल्लुकात बढ़ाए जाने के बावुजूद हम उनसे बरसरे पैकार रहेंगे। उन्होंने कहा कि हत्ता अगर फिलिस्तीन के मुआमले में अरब हुक्मरानों में 90 फीसद मायूसी भी छाई हो तो भी यहूदियों से मुकाबिले की सियासत में कोई तबदीली न आएगी और दिन बदिन इस मसअले में तेजी आती जाएगी। उन्होंने सहयूनी दुश्मन से मुकाबिले इस्तेकामत को एक तै शुदा मुआमिला करार देते हुए कहा कि हिज़बुल्लाह लेबनान के जनरल सिक्रेटरी सय्यद हसन नसरुल्लाह का बयान हमारे इस बयान की ताईद है। उलमाए इस्तेकामत यूनियन के सरबराह ने सय्यद हसन नसरुल्लाह की क़दर दानी करते हुए कहा कि हिज़बुल्लाह लेबनान के जनरल सिक्रेटरी इस मुल्क में मेडिकल, माली और इन्तेजामी बद उनवानियों को कन्ट्रोल करने में कामियाब हैं और गासिब यहूदियों कि जिसके इख़तेयार में मशरिक से लेकर मग़रिब तक फ़ौजी और माली इमकानात हैं उसे घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया।

दाइश के दहशतगर्द ईरान में दर अन्दाज़ी करने में नाकाम

अहलेबैत न्यूज़ एजेन्सी अबना के मुताबिक तेहरान में सहाफ़ियों से बात-चीत करते हुए ब्रिगेडियर जनरल मुहम्मद पाकपुर ने कहा कि सरहदी इस्तेहकाम की वजह से एम. के. ओ. और दाइश के दहशत गर्द ईरान में दर अन्दाज़ी करने में नाकाम रहे हैं। उन्होंने कहा कि मुसलेह अफ़वाज पूरी तरह होशियार हैं और अब तक दहशत गर्दों के मुतादिद इक़दामात को नाकाम, उनकी टोलियों को नाबूद और बहुत से अनासिर को गिरफ़्तार किया जा चुका है। सिपाहे पासदाराने इनकेलाबे इस्लामी के कमान्डर ने कहा कि हमारी अज़ीम फ़ौज के जवान दुश्मन की नक़ल व हरकत पर कड़ी नज़र रखे हुए हैं और किसी को भी ईरान की सरहदों के क़रीब फटकने की इजाज़त नहीं दी जाएगी। उन्होंने कहा कि आलमी सामराजी ताक़तें ख़िल्ले में बद अमनी फैलाकर ईरान को नुक़सान पहुंचाना चाहती हैं लेकिन मुसलेह अफ़वाज की चौकसी की वजह से वह अपने मज़मूम मक़सिद हासिल करने में नाकाम रही हैं।

(बक़िया पेज नं 16 का.....)

ऐश कर लो और वहां सुकून उठाना है, नेअमतें हासिल करना है तो दुनिया में मुसीबतें झेलो। अब 'बहलोल' को दुनिया दीवाना समझती थी मगर आप जानते हैं कि दीवाना बना था? हुक्मते वक्त से बचने के लिये। लोग खड़े हुये हैं, देखा बहलोल चले आरहे हैं। मैदान में एक बहुत लम्बा सा लट्टा पड़ा हुआ था। ये आये और लोग तमाशा देख रहे है कि कुछ करेंगे ज़रूर। ये आये और उस मोटे लट्टे का एक सिरा पकड़ कर उठाया और उठाते उठाते बिल्कुल सीधा कर दिया। फिर धम से छोड़ दिया। क्या कर रहे हैं भाई? कभी एक सिरा उठाते हैं, कभी दूसरा सिरा उठाते है। अब उसके बाद बीच में आये और चाहा कि बीच से उठाये तो लाख-लाख ज़ोर लगा रहे हैं लेकिन वह हिलता भी नहीं। लोगों ने पूछा कि ये क्या कर रहे हो? कहा कि तुम को बता रहा था कि दीन का मसअला भी यही है। एक सिरा दीन है और दूसरा सिरा दुनिया। फ़क़त दीन को उठा लेना भी आसान है और फ़क़त दुनिया को उठा लेना भी आसान है लेकिन दीन और दुनिया को मिला कर उठाओ तो यह बहुत मुश्किल बात है। बीच से उठाओ कि न दुनिया हाथ से जाने पाये और न दीन हाथ से जाने पाये। हालांकि ये बहुत मुश्किल काम है इसलिए कुछ लोग दुनिया को लेकर अलग हो गये। और कुछ लोग दीन को लेकर अलग हो गये। बहलोल दाना ने बता दिया कि इस तरह से चलो कि न दीन हाथ से जाने पाये और न दुनिया तुम्हारे हाथ से जाने पाये।